IJAER/Oct-Nov 2012/Volume-1/Issue-3/Article No-10/233-240 ISSN: 2278-9677

International Journal of Arts & Education Research

पुनर्जागरण काल में नारी की स्थिति

विपिन कुमार*[1]

[1]शोधार्थी, सी0एम0जे0 विश्वविद्यालय, मेघालय.

18वीं शताब्दी में सम्पूर्ण भारतीय समाज में सर्वत्र विभिन्न सामाजिक कुरीतियाँ और नैराशय था। भारतीय समाज धर्म, रूढ़ि और परम्पराओं के कठोर बन्धनों में जकड़ गया था। सर्वत्र अत्याचार, कुप्रथाओं का ही बोलबाला था, जिसमें नारी की स्थिति अधिक से अधिक निम्न स्तर की होती जा रही थी। इसी दौरान भारत की धार्मिक और रा-ट्रवादी चेतना अत्यधिक अंशों में सु-ुप्त हो गयी थी। इन्हीं सभी कारणों से 19वीं सदी में एक नवीन बौद्धिक लहर चली, जिसके फलस्वरूप जाग्रति के एक नये युग का सूत्रपात हुआ। अन्वे-ाण तथा तर्कवाद की भावना ने यूरोपीय समाज को एक प्रगति प्रदान की। यह सर्वमान्य तथ्य है कि ''विकास एक सहज प्रक्रिया है जिस प्रकार गन्ने की नई फसल उगाने से पहले पेढ़ी जलायी जाती है वैसे ही पतन की चरम सीमा पर पहुंचा समाज कुछ प्रबुद्ध जनों के आत्ममंथन से उत्पन्न प्रेरणा से नवीन कलेवर धारणा करता है'' यही 19वीं ृताब्दी के प्रारम्भ में भी हुआ। जब 18वीं ृताब्दी में सर्वत्र अशान्ति का वातावरण था तथा सम्पूर्ण समाज अन्धकार में डूबा हुआ था, तब 19वीं ृताब्दी में एक नवीन मध्यम वर्ग का उदय हुआ। यह नवीन शिक्षित मध्यम वर्ग तर्कवाद, विज्ञानवाद तथा मानववाद से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका। इन्हीं पाश्चात्य शिक्षित भारतीयों ने इस नवज्ञान से प्रभावित होकर हिन्दू धर्म में सुधार किये, तभी भारत के धार्मिक एवं सामाजिक जीवन में नवचेतना का संचार हुआ। इसी सदी ने एक नवीन विचारधारा को जन्म दिया और भारत के समाज, धर्म, साहित्य तथा राजनीतिक जीवन को गम्भीरतापूर्वक प्रभावित किया। भारत में जागृति की इस प्रक्रिया को पाश्चात्य ज्ञान ज्योति से यथे-ट बल मिला।

यह सर्वविदित तथ्य है कि अंग्रेजी राज का जो प्रभाव भारतीय समाज पर पड़ा वह उन सभी प्रभावों से अलग था जो उस समय तक भारत पर हुए थे। इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि अंग्रेजों से पूर्व भी भारत पर अनेक विदेशी आक्रांताओं ने आक्रमण किया था तथा भारतीयों को हराकर भारत पर राज किया था परन्तु उस समय तक भारत ने कभी भी आत्मविश्वास नहीं खोया था और उसे सदैव यह आन्तरिक विश्वास था कि उसकी सभ्यता तथा संस्ौति अन्य विदेशी शासकों की संस्ौति से अधिक उत्तम है। प्रायः ऐसा हुआ कि अंग्रेजी शासकों से पहले भारत में जिन विदेशी शासकों का आगमन हुआ था उन्होंने भारतीय धर्म, संस्ौति तथा सभ्यता को अपना लिया था तथा वे भारतीय समाज का अभिन्न अंग बन गये।[2] परन्तु जब भारतीय समाज एक निश्चल, निष्प्राण तथा अत्याधिक दयनीय था, उसी समय भारत का एक ऐसे आक्रान्ता से सामना हुआ जो न केवल रंग में श्वेत था अपितु अपने आपको सामाजिक तथा सांस्ौतिक रूप से अत्याधिक उत्तम समझता था। यद्यपि प्रारम्भ में ऐसा प्रतीत होता था कि सभ्यता की इस दौड़ में भारत पिछड़ जाएगा- परन्तु इसी समय पश्चिमी शिक्षा प्राप्त नवयुवकों ने न केवल हिन्दू धर्म तथा समाज से नाता

तोड़ने से इंकार कर दिया वरन् हिन्दू धर्म तथा समाज में सुधार करने का बीड़ा भी उठाया। इसी के फलस्वरूप भारत की स्पन्दनशील जीवनी शक्ति पुनः जागृत और सक्रिय हुई।[3] इसी समय मार्ग में भटके हुए भारतवासियों को पुनः सदमार्ग पर लाने और देश का पुर्ननिर्माण करने हेतु भारत में अनेक धार्मिक आन्दोलन चल पड़े, जिन्होंने देश में राजनीतिक तथा सांस्औतिक पुनर्जागरण के उद्भव एवं प्रसार में योगदान किया।

अंग्रेजी भाषा, अंग्रेजी शासन, पाश्चात्य संस्औति, विदेशों से सम्पर्क, ईसाई पादरियों के धार्मिक प्रचार आदि के कारण भारत में जो पुनर्जागण की भावना आयी तथा उससे जो पुनरूद्धार आन्दोलन भारत में हुआ, उसने भारत के धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, साहित्यिक, कलात्मक तथा राजनीतिक आदि सभी क्षेत्रों को प्रभावित किया तथा जीवन के सभी अंगों में एक नवीन भावना का उद्भव किया।[4] यद्यपि धार्मिक तथा सामाजिक आन्दोलनों का प्रारम्भ भारत में 14वीं शताब्दी में ही हो गया था किन्तु उस दौरान राजनैतिक परिस्थितियों के कारण वे आन्दोलन मृत प्रायः ही थे, तथा भारत की सभ्यता एवं संस्औति पर भारतीयों के आत्मविश्वास की भावना अधिक समय तक नहीं रह सकी। इसी के परिणामस्वरूप भारत में धर्म सुधार आन्दोलन हुआ किन्तु यह धर्म सुधार आन्दोलन केवल धर्म सुधार तक ही सीमित नहीं था, वरन् समाज सुधार भी इन आन्दोलनों का मुख्य लक्ष्य था। धर्म भारतीय समाज का प्रारम्भ से ही केन्द्र बिन्दु रहा है[5] तथा इसे समाज से पृथक नहीं किया जा सकता। हीगल ने भी कहा है कि पुनर्जागरण के बिना कोई धर्म सुधार सम्भव नहीं। भारतीय समाज और मुख्यतः हिन्दू समाज में अनेक सामाजिक कुरीतियों का समर्थन धर्म के आधार पर किया जाता था, जिससे साधारण व्यक्ति उन कुरीतियों को तोड़ने का साहस नहीं कर सकते थे। अतः इन सामाजिक कुरीतियों को समाप्त करना धर्म का विरोध करना नहीं बल्कि इसके विपरीत अपने धर्म और समाज को शक्तिशाली बनाना था[6] क्योंकि यही भारत में व्याप्त कुरीतियों को समाप्त भी कर सकता था, जिससे भारतीय समाज जो पतन के गर्त में पहुँच चुका था वह उससे निकलकर अपना उद्धार कर सके। यही नहीं वरन् भारतीय समाज पर जिन अन्धविश्वासपूर्ण सामाजिक कुरीतियों का दोषारोपण था, उन्हें भी समाप्त किया जा सके।

ऐसी ही परिस्थिति में देश में कुछ महापुरुषों का तथा कुछ महात्माओं का प्रादुर्भाव हुआ, जिन्होंने सामाजिक तथा धार्मिक क्षेत्रों की कुरीतियों के विरूद्ध जेहाद प्रारम्भ किया तथा सुधार आन्दोलन का सूत्रपात किया। सुधार आन्दोलन के माध्यम से उन्होंने देश के जीण-शीर्ण समाज का परिष्कार किया, उसे नया जीवन दिया, देशवासियों में राष्ट्रीय भावना की जागृति और संपुष्टि की और अनेक राजनीतिक आदर्शों का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में स्थापित करने का प्रयास किया।[7] इसी राष्ट्रीय पराभव और धार्मिक सामाजिक विऔति की दशा में ऐसे प्रगतिशील धार्मिक आन्दोलन संचालित किये गये, जिनसे भारतवासी अपनी त्रुटियों और न्यूनताओं के प्रति सचेत हुए, उन्हें अपनी राष्ट्रीय आत्मा का ज्ञान हुआ और उन्हें अपना वह स्वार्णिम अतीत याद आया जिसमें इस देश की महान संस्औति का गौरव छिपा हुआ था।[8] इन आन्दोलनों में भारतीय संस्औति के आदर्शों का उत्कट रूप से प्रचार-प्रसार करने के साथ-साथ भारतवासियों में पुनः अपनी संस्औति के प्रति अगाध श्रद्धा जागृत की गयी थी, ताकि वे अपनी संस्औति रूपी अमोल धरोहर की गरिमा

Copyright © 2012 Published by IJAER. All rights reserved.

को बनाये रख सके तथा उसकी रक्षा का बीड़ा उठाये। भारतीय संस्औति के महान आदर्शों को चरितार्थ करने के निर्मित देशवासियों का आह्वान करने में इन महापुरुषों ने व्यापक दृष्टिकोण अपनाया, जिसमें न ऊँच-नीच का भेदभाव था, न सवर्ण का पक्षपात।[9] यह पुनर्जागरण मुख्यतः मानवतावादी दृष्टिकोण का था तथा इसमें जिस मध्यम वर्ग ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया था, उन सभी के आदर्श वेदों, उपनिषदों और गीता की शिक्षाओं पर आधारित थे।

वास्तव में पुनर्जागरण काल से पहले नारी की स्थिति तनिक भी सन्तोषजनक नहीं थी, ऐसी परिस्थिति में सभी समाज सुधार आन्दोलन मुख्यतः स्त्रियों की समस्याओं पर ही केन्द्रित रहे। भारतीय नवजागरण बहुआयामी था। इससे राष्ट्रीय चेतना मुखर हुई और इसी कारण इससे नारियां भी अप्रभावित नहीं रहीं। हेमसेथ चार्ल्स ने अपनी पुस्तक में कहा है कि- ''आधुनिक भारत के निर्माण हेतु स्त्री सुधार आन्दोलन को मूल सिद्धान्त के रूप में स्वीकार किया गया है, इसके बिना आधुनिक भारत में बौद्धिक प्रक्रिया पूरी नहीं हो सकती।''[10] इसलिए कोई साहित्य भारत में इतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना सुधारों से सम्बन्धित साहित्य है। वैसे भी भारतीय समाजसुधारकों ने अपने धार्मिक ग्रन्थों की नये ढंग से व्याख्या की तथा अपने द्वारा लाये गये सुधारों को प्राचीन संस्औति से जोड़ा इसलिए ये सुधार क्रान्तिकारी न होकर मूलतः विकासवादी रहे।[11] जिसमें नारी की स्थिति में सुधार का सम्मिलित होना अवश्य सम्भावी था।

इस काल में सतीप्रथा, बाल विवाह, विधवाओं की दुर्दशा, कन्यावध, बहुविवाह, जैसी समस्याऐं भारतीय समाज में नारी की स्थिति को आपत्तिजनक बनाये हुए थी। जिससे नारी की स्थिति अत्यधिक निन्दनीय एवं निम्न स्तर की हो गयी थी, उन्हें समाज में मात्र भोग्या ही माना गया था। उन्हें वह स्थान समाज में प्राप्त नहीं था, जो प्राप्त होना चाहिए था। यद्यपि पुनर्जागरण काल के प्रारम्भ में ब्रिटिश सरकार ने अपने अधीन भारतीय लोगों के धर्म तथा समाज में हस्तक्षेप न करने की नीति अपनायी थी किन्तु कालान्तर में उनका सम्पर्क ऐसे मध्यमवर्ग से हुआ जो विशेष रूप से नारी की स्थिति में सुधार करना चाहता था। इन्हीं सुधारों के फलस्वरूप नारी की स्थिति में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए थे, जिसने न केवल भारतीय समाज को प्रभावित किया वरन् लगभग सम्पूर्ण समाज ने नारी के महत्व को पहचाना था। 19वीं शताब्दी में ही राजाराममोहन राय, ईश्वरचन्द विद्यासागर, स्वामी विवेकानन्द ने नारी की स्थिति सुधारने में महत्वपूर्ण भूमिका का निवहि किया था।[12] ये पिश्चमी शिक्षा प्राप्त वर्ग नारियों की दयनीय स्थिति के प्रति अत्यषिक जागरूक हुआ था तथा उन्होने नारी की स्थिति में सुघार करने का द्रढ संकल्प कर लिया था। इस काल में नारी उद्धार हेतु विभिन्न प्रकार के सराहनीय प्रयास किये गये थे।

पुनर्जागरण काल में सर्वप्रथम सती प्रथा का विरोध किया गया था सती प्रथा एक ऐसी प्रथा थी जिसमें पति के प्रति निष्ठा और समपर्ण की भावना के कारण पत्नी को पति के शव के साथ जल जाने हेतु बाध्य किया जाता था। जो उस स्त्री के अपने पति के प्रति समर्पित और उसके चरित्र के निष्पाप होने की पुष्टि कर सके। यद्यपि भारत में सती प्रथा प्राचीनकाल से रही है[13] तथा भारतीय संस्औति और साहित्य में सीता,

Copyright © 2012 Published by IJAER. All rights reserved.

सावित्री, अनुसूया, दमयंती आदि नारियों को सती माना गया है। परन्तु यह एक ऐसी प्रथा थी जिसमें नारी को मात्र अपना समपर्ण भाव प्रदर्शित करने हेतु अपने शरीर का त्याग करना पड़ता था। मध्यकाल के दौरान मुगल सम्राट अकबर और जहाँगीर ने भी इस अमानवीय प्रथा को समाप्त करने का प्रयत्न किया था परन्तु वे इसमें सफल नहीं हो सके।[14] तत्पश्चात फ्रांसीसियों और डचों ने अपने-अपने क्षेत्रों में इस क्रूर प्रथा पर अंकुश लगाने की कोशिश की, लेकिन इससे सती की घटनाओं में कोई विशेष कमी नहीं आयी। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि बहुत सी स्त्रियाँ अपनी खुशी से सती होती थी तथा स्त्रियों के मन में यह विश्वास एक संस्कार के रूप में व्याप्त था, परन्तु इस प्रथा का सबसे जघन्य पहलू यह था कि जो स्त्रियाँ अपने पति के शव के साथ सती नहीं होनी चाहती थीं, उन्हें जबरन सती होने के लिए बाध्य किया जाता था।[15] अग्नि संस्कार के समय घंटे-घड़ियाल बजाये जाते थे ताकि कोलाहल में यदि सती होने वाली स्त्री चिल्लाये तो उसकी आवाज दब जाये तथा वह भाग न सके। इसी क्रूर प्रथा को समाप्त करने प्रयत्न पुनर्जागरण काल में किया गया जिससे नारी को जबरन सती होने से बचाया जा सके।

इस काल में पुर्नविवाह हेतु भी भरसक प्रयत्न किया गया था। भारतीय समाज में वैचारिक परिवर्तन के फलस्वरूप कुछ चिन्तनशील व्यक्ति यह सोचने लगे कि विधवा को तो पुर्नविवाह के अधिकार से वंचित किया गया है किन्तु पुरुष स्वयं पहली पत्नी के जीवित होते हुए भी दूसरी और तीसरी स्त्री से विवाह कर सकता है। पति चाहे कितना ही क्रूर दुराचारी और दुश्चरित्र क्यों न हो पत्नी के लिए देवता तुल्य है। पति चाहे कितना ही निऔष्ट जीवन व्यतीत क्यों न व्यतीत करता हो, पत्नी को पतिव्रत्य का पालन करना चाहिए। स्त्री को पति की मृत्यु के पश्चात जिन्दा चिता में जलने के लिए बाध्य किया गया और पुरुष को पत्नी की मृत्यु के बाद शीघ्र ही दूसरा विवाह करने का आदेश दिया गया और वह भी धर्म के नाम पर धार्मिक क्रियाओं के सम्पादन हेतु। पेशवाओं ने तो विधवा के पुर्नविवाह पर 'पतदाम' नाम का एक कर भी लगा दिया था।[16] ताकि कर के कारण भी कोई ऐसा साहस न कर सके। हिन्दू समाज में नैतिकता का यह दोहरा मापदण्ड मनु के समय से लेकर 1950 तक चलता रहा था परन्तु पुनर्जागरण काल में इस दोहरे मापदण्ड का विरोध किया गया था जिसमें पुरुषों को समस्त अधिकार देकर स्त्रियों को इनसे बिल्कुल वंचित कर दिया गया था। समाज सुधारकों द्वारा इस प्रकार की स्थिति को अनुचित और अन्यायपूर्ण माना गया तथा इसका विरोध करने के साथ-साथ इसे परिवर्तित करने का भी प्रयास किया गया। इस काल में पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त मध्यम वर्ग ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि पुराने संस्औत और वैदिक उल्लेखों से यह पुष्टि होती है कि वेद विधवा विवाह की अनुमति देता है।[17] जब प्राचीनकाल में विधवा पुर्नविवाह की अनुमति थी तो अब ऐसा क्यों नहीं है तथा पुरुषों की भांति स्त्री को भी पुर्नविवाह की अनुमति होनी चाहिए। इन्हीं के प्रयत्नों के फलस्वरूप विधवा स्त्रियों को दूसरा विवाह करके अपनी अवस्था को सुधारने का अवसर मिला।

पुनर्जागरण काल में लड़कियों के लिए शिक्षा की ओर भी ध्यान दिया गया था। इस काल में स्त्रियों को शिक्षा प्राप्ति का अधिकार तो थ परन्तु वह केवल सम्पन्न तथा उच्चवर्ग से सम्बन्धित लड़कियों तक ही सीमित था। साधारण जन में लड़कियों को शिक्षा प्राप्ति का कोई अधिकार प्राप्त नहीं था, वे इससे बिल्कुल वंचित थी।

Copyright © 2012 Published by IJAER. All rights reserved.

उन्नीसवीं शताब्दी में हिन्दुओं में एक मनघड़न्त जनश्रुति प्रचलित थी कि हिन्दु शास्त्रों में स्त्री शिक्षा की अनुमति नहीं है और शिक्षित स्त्री को देवता लोग वैधव्य का दण्ड देते हैं।[18] वास्तव में इस काल में समाज में व्याप्त निराशाजनक तथा अन्धविश्वासों से युक्त विचारधारा नारी शिक्षा के मार्ग में बाधक बनी हुई थी। भारतीय समाज में अज्ञानता-अशिक्षा तथा धर्मान्धता के कारण हिन्दू तथा मुसलमान दोनों जाति के व्यक्ति रूढ़िवादिता से ग्रसित थे, जो कि लड़कियों की शिक्षा प्राप्ति को उचित नहीं मानते थे। इस समय स्त्रियों को केवल घर की चहारदीवारी तथा घर के कामकाज तक ही सीमित रखा गया था। उन्हें बाहरी जन-जीवन से कुछ सम्बन्ध नहीं रखने दिया जाता था परन्तु पुनर्जागरण काल में पूर्णतया शिक्षित तथा पाश्चात्य सभ्यता के अनुयायी भारतीयों ने तर्कवाद तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखकर इस रूढ़िवादिता के मन्धन शिथिल किये तथा अर्द्धशिक्षित धर्मजाल में फंसे हुए तथा प्राचीन परम्पराओं के आधार पर नारी को शिक्षित होने के अधिकार से वंचित रखने वालों के विरूद्ध कठोर संघर्ष किया। लड़कियों के लिए अलग से स्त्री शिक्षा केन्द्र या विद्यालय खोलने पर बल दिया गया। इसके साथ-साथ उन्होंने इस बात पर भी बल दिया कि समाज में पुरुषों द्वारा स्त्रियों पर लगाये गए अंकुश, शासन तथा दमन नीति को रोकना चाहिए, क्योंकि इस प्रकार के दमन से नारी शिक्षा के क्षेत्र में बाधा उत्पन्न होती है। यही प्रयास धीरे-धीरे स्त्री शिक्षा के माध्यम से स्त्रियों की दशा सुधारने का एक मुख्य अंग बन गया।[19]

पुनर्जागरण काल में **बहुविवाह** जोकि एक प्राचीन सामाजिक बुराई थी,[20] तथा हिन्दुओं और मुस्लमानों दोनों में विद्यमान थी, के विरूद्ध भी संघर्ष किया गया था। बहुविवाह प्रथा द्वारा नारी का अत्याधिक शोषण किया जा रहा था तथा इस दौरान तो बहुविवाह की एक बेहूदी प्रणाली ने विकराल रूप धारण कर लिया था। एक कुलीन एक ही दिन में दो-तीन या चार स्त्रियों के साथ विवाह कर सकता था। अपने जीवनकाल में वह दर्जनों पत्नियां यहाँ तक कि 100 पत्नियां रख सकता था। ऐसे माता-पिता भी थे, जो एक ही परिवार में अपनी सारी लड़कियों का विवाह कर देते थे। कई स्थानों पर तो छोटे ब्राह्मण अपनी लड़कियों को कुलीनों के हाथ देने के लिए दूसरे से होड़ लगाते थे तथा कुलीनों ने तो विवाह को आजीविका साधन या व्यवसाय बना लिया था। वे अब बहुत से विवाह करके लाभ अर्जित करने लगे थे। परन्तु इस प्रथा को सबसे अमानुषिक पहलू यह था कि कुलीन पति को अपनी बहुत सारी पत्नियों का खर्च उठाने की जरूरत नहीं थी।[21] इस प्रथा के कारण ही समाज में अत्याधिक व्याभिचार तथा अनैतिकता का वातावरण व्याप्त हो गया था। धीरे-धीरे यह स्थिति व्याप्त हो गयी थी कि धर्म को आधार बनाकर बिना किसी के समर्थन से यह कुलीनवाद एक सामाजिक अन्धविश्वास में विकसित हो गया था तथा अत्याधिक संख्या में स्त्रियों का जीवन न केवल नष्ट हुआ वरन् उन्हें मात्र उपभोग की वस्तु ही माना जाने लगा। परन्तु अब समाज में नारी सुधार के प्रति एक जागृति उत्पन्न होने से बहुविवाह के विरूद्ध भी आन्दोलन चलाये गये थे तथा नारी को बहुविवाह जैसी कुप्रथा से बचने का अवसर प्राप्त हो गया था।

इसी के साथ-साथ इस समय समाज **बालविवाह** जैसी क्रूर प्रथा से भी पीड़ित था। इस प्रथा के द्वारा लड़कियों का विवाह अत्याधिक कम आयु में कर दिया जाता था।[22] इसी के कारण न केवल लड़कियों का

Copyright © 2012 Published by IJAER. All rights reserved.

हँसता-खेलता जीवन उनसे छिन जाता था वरन् एक पारिवारिक बोझ का वहन भी उसी पर आ पड़ता था। वास्तव में इस समय कन्या का जन्म अपशकुन, उसका विवाह बोझ एवं वैधव्य श्राप समझा जाता था। जिसके कारण कुछ माता-पिता तो दहेज इत्यादि के बोझ से बचने हेतु कन्या के जन्म के समय ही उसकी हत्या कर देते थे तथा कुछ अपनी कन्या का विवाह कम आयु में कर देते थे ताकि उनके पालन-पोषण तथा शिक्षा आदि के समय होने वाले व्यय से बचा जा सके। इसी प्रथा के फलस्वरूप बालिका का शारीरिक तथा मानसिक विकास अवरूद्ध हो जाता था तथा वह परिवार के बोझ तले दब जाती थी। परन्तु इसी समय शिक्षित वर्ग नारी की इस दयनीय स्थिति के प्रति जागरूक हुआ तथा उन्होंने इसके विरूद्ध अभियान करने का बीड़ा उठाया। उन्हें इस बात का भली भाँति ज्ञान हो गया था कि कन्या वध पर नियंत्रण से ही नारी की स्थिति में कोई सुधार नहीं आयेगा, इसी के साथ-साथ हमें बहुविवाह के विरूद्ध भी सकारात्मक प्रयास करना होगा। ताकि जो नारी अपने समस्त अधिकारों से वंचित है उसे वे समस्त अधिकार प्राप्त हो सकें।

इस प्रकार पुनर्जागरण काल में नारी उद्धार हेतु विभिन्न प्रकार के प्रयास किये गये थे। **सती प्रथा** का विरोध किया गया था, **विधवा पुर्नविवाह** को प्रोत्साहित किया गया था तथा बाल विवाह व **बहुविवाह** जैसी कुप्रथाओं के विरूद्ध भी प्रतिरोध किया गया था। इसी समय **नारी शिक्षा** के प्रति भी भारतीय समाज जागरूक हुआ था तथा नारी को शिक्षा प्राप्त हो सके इसलिए विभिन्न प्रकार के सराहनीय प्रयास किये गये थे ताकि नारी अपने अधिकारों के लिए स्वयं लड़ सके। विशेषकर इस दौरान लोकतंत्र एवं राष्ट्रवाद के उफान ने भारतीयों एवं भारत की सामाजिक एवं धार्मिक संस्थाओं को भी प्रभावित करना प्रारम्भ कर दिया, जिससे शीघ्र ही पुनर्जागरण की प्रक्रिया के उद्‌भव एवं विकास की पृष्ठभूमि भी तैयार हो गयी। विभिन्न कारक जैसे- राष्ट्रवादी भावनाओं के विकास, नयी आर्थिक शक्तियों के अभ्युदय, शिक्षा के प्रसार, आधुनिक पाश्चात्य मूल्यों एवं संस्औति के प्रभाव तथा विश्व समुदाय को सशक्त करने की सोच ने ही सुधार के मार्ग को प्रशस्त किया।

इन नवीन विचारों के विक्षोभ ने भारतीय संस्औति में एक प्रसार की भावना उत्पन्न की। संस्औत के अध्ययन के कारण लोगों को उस ज्ञान की प्राप्ति हुई जिससे पहले भारतीय समाज अनभिज्ञ था। अब भारतीय बुद्धिजीवियों ने देश में भूतकाल को परखने का प्रयत्न किया और यह देखा कि हिन्दू धर्म में बहुत से विश्वास तथा रीतिरिवाज न केवल गलत हैं अपितु उन्हें मानना सम्भव भी नहीं हैं तथा उन्हें त्यागना ही ठीक है। इसी प्रकार उन्होंने यह भी देखा कि भारत के **सांस्औतिक स्मिथ** (वातावरण) में कुछ ऐसे पक्ष भी हैं जिनका भारतीय, पुनर्जागरण में तार्किक मर्म है।[23] इसी के फलस्वरूप भारतीय समाज में कुछ धार्मिक तथा सामाजिक सुधार आन्दोलन प्रारम्भ हुए। जिनसे समाज में विभिन्न पक्षों के साथ-साथ नारी पक्ष भी प्रभावित हुआ। अब नारी की स्थिति में कुछ सुधार होना प्रारम्भ हो गया था तथा नारी की स्थिति भी धीरे-धीरे सम्मानजनक होने लगी थी। यह सर्वविदित है कि नारी की स्थिति प्राचीन काल जैसी नहीं थी तथा उसे वे समस्त अधिकार प्राप्त नहीं थे, जो प्राप्त होने चाहिए थे परन्तु अब धीरे-धीरे नारी की स्थिति में सुधार होने लगा था जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण- नारी के लिए शिक्षा प्राप्ति था। अब शिक्षा प्राप्ति के पश्चात नारी स्वयं भी

Copyright © 2012 Published by IJAER. All rights reserved.

जागरूक हुई थी तथा उसने भी अपनी स्थिति को सुधारने का प्रयत्न करना प्रारम्भ कर दिया था। इसी समय हुई नव चेतना के स्फुरण के अनुभव से ही नारी की स्थिति विकासोन्मुख हो रही थी।

यदि हम निष्पक्ष दृष्टि से मूल्यांकन करें तो इस तथ्य की पुष्टि होती है कि पुनर्जागरण काल ही नारी की स्थिति में सुधार करने का प्रारम्भिक कदम था, जिसने समाज में नारी को महत्वपूर्ण स्थान दिलाने में सक्रिय भूमिका निभायी थी। इसी काल में समाज सुधारकों ने स्त्री उद्धार को ही अपने आन्दोलन का मुख्य लक्ष्य रखा था ताकि महिलायें जो कि समाज का 50 प्रतिशत है उनका कल्याण हो सके एवं यह समाज अर्द्धविकसित होने से बच जाये। यह ज्ञातव्य है कि पश्चिमी शिक्षा ने मध्यम वर्ग में एक नयी चेतना का विकास किया था जिससे उन्होंने नारी को समाज का महत्वपूर्ण भाग मानकर उसे उसके अधिकार दिलाने का दृढ़ संकल्प किया तथा अपने इस कार्य में उन्हें सफलता भी प्राप्त हुई।

अतः पुनर्जागरण ज्ञानबोध, जागृति, सांस्औतिक नवजागरण, सुधारों, तर्कसंगत बातों और प्रगति का युग था, जिसकी चरम परिणति स्वतंत्रता और एकता की आवश्यकता के प्रति बढ़ती हुई चेतना में हुई।

संदर्भ सूची

1. ग्रोवर, बी.एल., ''आधुनिक भारत का इतिहास'', एस चन्द लि. नई दिल्ली, 2007
2. पूर्वोक्त
3. पाण्डेय, डा. धनपति, ''आधुनिक भारत का इतिहास, (1857-1947)'', मीनाक्षी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008
4. मित्तल डा. ए.के., ''भारत का राजनीतिक एवं सांस्औतिक इतिहास (1707-1950)'', साहित्य भवन, दिल्ली
5. चौपड़ा, पी.एन., पुरी, बी.एन., दास, एम.एन., ''भारत का सामाजिक, सांस्औतिक और आर्थिक इतिहास'', मैकमिलन इण्डिया लिमिटेड, नई दिल्ली, 1975
6. मित्तल डा. ए.के., ''भारत का राजनीतिक एवं सांस्औतिक इतिहास (1707-1950)'', साहित्य भवन, दिल्ली
7. पाण्डेय, डा. धनपति, ''आधुनिक भारत का इतिहास, (1857-1947)'', मीनाक्षी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011

Copyright © 2012 Published by IJAER. All rights reserved.

8. पूर्वोक्त

9. पूर्वोक्त

10. हेमसेथ चार्ल्स, ''इण्डियन नेशनेलिज्म एण्ड हिन्दू सोशल रिफार्म'', प्रिन्सटन, 1964

11. नटराजन, एस.ए., ''सैन्चुरी ऑफ सोशल रिफार्म इन इण्डिया'', लन्दन, 1964, पृ. 2

12. ष्व्तवबममसपदहे वि जीम प्दकपंद भ्पेजवतल ब्वदहतमेष चनइसपेीमक इल ैीतपतममद डववेअप ब्मदजतम वि ।कअंदबमे जनकल पद भ्पेजवतलए ।सपहंतीए 2010

13. मजूमदार, आर.सी., ''द हिस्ट्री एण्ड कल्चर ऑफ इण्डियन पीपुल'', खण्ड-2, भारतीय विद्या भवन, बम्बई, 2006

14. गुप्त, विश्वप्रकाश एवं गुप्त, मोहिनी, ''राजा राममोहन राय व्यक्ति और विचार'', राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2008

15. पूर्वोक्त

16. ग्रोवर, बी.एल., ''आधुनिक भारत का इतिहास'', एस चन्द एण्ड कम्पनी लि., नई दिल्ली, 2007

17. पूर्वोक्त

18. पूर्वोक्त

19. पूर्वोक्त

20. चौपड़ा, पी.एन., पुरी, बी.एन., दास, एम.एन., ''भारत का सामाजिक, सांस्औतिक और आर्थिक इतिहास'', मैकमिलन इण्डिया लिमिटेड, नई दिल्ली, 2004

21. पूर्वोक्त

22. मित्तल, ए.के., ''भारत का राजनीतिक एवं सांस्औतिक इतिहास'', साहित्य भवन, दिल्ली

23. ग्रोवर, बी.एल., ''आधुनिक भारत का इतिहास'', एस चन्द एण्ड कम्पनी लि., नई दिल्ली, 2006

Copyright © 2012 Published by IJAER. All rights reserved.